क्या जानवरों में होता है आत्मबोध?

डॉ. टी.वी. वेंकटेश्वरन एवं नवनीत कुमार गुप्ता

कहानियां केवल मनोरंजन ही नहीं करती वरन् नए विचारों को जन्म देने के साथ ही समाज में नैतिकता को भी प्रसारित करती हैं। कहानियों की प्रसिद्ध किताब पंचतंत्र की एक कहानी 'मूर्ख शेर और बुद्धिमान खरगोश' के अनुसार शेर अपने प्रतिबिंब को पहचान नहीं पाता और खरगोश उसे बेवकूफ बनाकर अपनी जान बचा लेता है। वैज्ञानिकों ने अपने अध्ययन से यह निष्कर्ष निकाला है कि अनेक जानवर स्वयं के प्रतिबिंब को पहचान नहीं पाते हैं। शोधकर्ताओं के अनुसार इस प्रकार के प्रयोग हमें यह पता लगाने में सहायक हो सकते हैं कि जानवरों में आत्मबोध होता है या नहीं।

चार्ल्स डार्विन ने भी इसी प्रकार के विचार यानी जानवरों में आत्मबोध को समझने की कोशिश की थी। उन्होंने लंदन के एक चिड़ियाघर में ओरांगुटान के एक जोड़े के सामने एक दर्पण पकड़ा और उनकी प्रतिक्रियाओं पर ध्यान दिया। लेकिन वे किसी स्पष्ट निष्कर्ष पर न पहुंच सके।

1970 में एक स्नातक छात्र गार्डन गैलप्स जब दर्पण के सामने बैठकर दाढ़ी बना रहा था तो उसे एक विचार आया। स्वयं के प्रतिबिंब को दर्पण में देखकर उसने सोचा - "क्या अन्य जीव भी अपने प्रतिबिंब को दर्पण में पहचान सकते हैं?" गैलप्स ने अपने इस विचार को परखने के लिए एक प्रयोग किया जिसे उसने दर्पण प्रयोग नाम दिया।

प्रयोग के लिए गैलप्स की पहली पसंद एक चिम्पैंज़ी था जो कि मानव का निकट सम्बंधी है। लेकिन इस बात को किस प्रकार परखा जाए कि चिम्पैंज़ी अपने प्रतिबिंब को पहचान पाते हैं या नहीं? गैलप्स के दिमाग में इसके लिए एक सुंदर प्रयोग का विचार आया। उसने चिम्पैंज़ी को बेहोशी की एक सामान्य दवा दी और उसके शरीर के कुछ ऐसे हिस्सों को जैसे भौहें, उसकी आंखों के पास और नाक के किनारों को इस प्रकार रंगा कि उन हिस्सों को वह बिना दर्पण के नहीं देख सकता था। होश आने पर चिम्पैंज़ी ने दर्पण में दिखाई दिए अपने प्रतिबिम्ब के अंतर को अनुभव किया और उसने रंगे हुए हिस्सों को छुआ और फिर दर्पण में अपनी उंगली के किनारों को देखने लगा।

गैलप्स ने यह प्रयोग फिर से दोहराया। उसने कुछ और जानवरों पर भी यह प्रयोग किया। अपने इस प्रयोग में गैलप्स ने कुत्तों, बिल्लियों, पक्षियों, हाथियों और बंदरों की 20 से अधिक प्रजातियों का अध्ययन किया। हालांकि कुछ ही जीव इस दर्पण प्रयोग में सफल हो पाए। इस प्रयोग में सफल होने वाले जीवों में कपि, ओरांगुटान और गोरिल्ला शामिल थे।

इस प्रयोग के बारे में आपका मानवों के बारे में क्या ख्याल है? सन् 1972 में उत्तरी केरोलीना के बुल्हा एमस्टर्डम ने एक साधारण प्रयोग किया। उन्होंने 6 से 24 महीनों के बच्चों की नाक पर मार्कर पेन से निशान बनाए और फिर उनकी माताओं ने दर्पण में बच्चों को उनका प्रतिबिम्ब दिखाते हुए पूछा कि वह कौन है? इस प्रयोग के दौरान बच्चों की प्रतिक्रियाओं का विश्लेषण वीडियो कैमरों की मदद से किया गया।

एमस्टर्डम ने 88 बच्चों पर यह प्रयोग किया उनमें से उन्हें केवल 16 बच्चों से विश्वसनीय आंकड़े प्राप्त हुए। आखिर बच्चे तो बच्चे हैं, कई ने तो अपने प्रतिबिंब पर ध्यान ही नहीं दिया। कुछ बच्चे तो दर्पण की बजाय कैमरे की ओर आकर्षित हुए थे। 6 से 12 महीनों की उम्र के अधिकतर बच्चों ने ऐसा व्यवहार दर्शाया जैसे दर्पण में दिख रहा प्रतिबिंब किसी दूसरे बच्चे का हो। अधिकतर बच्चों का व्यवहार ऐसा था जैसा वे किसी दूसरे बच्चे से मिलने के दौरान दर्शाते थे। बच्चों ने दर्पण में दिख रहे प्रतिबिंब को दूसरा बच्चा समझा और उसके सामने उन्होंने मुस्कराने, और उससे बातें करने जैसा व्यवहार किया।

हालांकि इस प्रयोग में 13 से 24 महीनों के बच्चे थोड़ी दुविधा में देखे गए और प्रयोग के दौरान कभी-कभार वे गुस्सा भी करते थे। कुछ बच्चे मुस्करा रहे थे तो कुछ शोर

मचाते हुए अपने प्रतिबिंब को पकड़ने की प्रसन्नता से दूर थे। उनकी प्रतिक्रियाओं और उनके द्वारा फुसफुसाने पर प्रतिबिंब उनकी नकल करता था। इस वर्ग के बच्चे अपने प्रतिबिंब और उसकी अजीब प्रतिक्रियाओं को आत्मबोध के कारण पहचान रहे थे। कुल मिलाकर उनकी प्रतिक्रिया छोटे बच्चों से अलग थी।

20 से 24 माह की उम्र वाले बच्चे दर्पण प्रयोग के दौरान इस बात का अनुभव कर लेते थे कि उनकी नाक पर कोई निशान लगाया गया है। वे दर्पण में दिख रहे प्रतिबिम्ब की मदद से उस स्थान को खोजने और उसे साफ करने का प्रयास करते थे। इस आयु वर्ग के बच्चे दर्पण में दिखने वाले अन्य प्रतिबिंबों को पहचान पाते थे और अनुभव करते थे कि ये प्रतिबिंब उनके आसपास की वस्तुओं के हैं। हालांकि 16 बच्चों के आंकड़ों के आधार पर किसी निश्चित निष्कर्ष पर तो नहीं पहुंचा जा सकता लेकिन इसे अधिक बच्चों पर दोहराया जा सकता है।

इस प्रयोग के बारे में एक बात यह भी कही गई कि प्रयोग के दौरान बच्चों द्वारा नाक को छूना शायद महत्त्वपूर्ण न हो। यह दर्पण में अपने प्रतिबिंब को देखकर उनकी स्वाभाविक प्रतिक्रिया भी हो सकती है। इस संभावना को परखने के लिए एक दूसरा प्रयोग किया गया जिसमें 20 से 24 महीनों के बच्चों को दो समूहों में बांटा गया। एक समूह के बच्चों की नाक पर कोई निशान नहीं लगाया गया जबकि दूसरे समूह के बच्चों की नाक पर निशान लगाए गए। जिन बच्चों की नाक पर निशान नहीं था उन्होंने दर्पण में अपना प्रतिबिंब देखकर नाक को स्पर्श नहीं किया। लेकिन दूसरे समूह के बच्चों ने अपनी नाक पर लगे निशान को साफ करने की कोशिश की। इससे यह साफ हुआ कि प्रतिबिंब को देखकर नाक को छूना आत्मबोध की निशानी है।

इस अध्ययन से यह साफ हुआ कि मानवों में जो आत्मबोध होता है वह ऐसी क्षमता नहीं है जो जन्म से ही हमारे दिमाग में होती है। इसका सम्बंध दिमागी और मानसिक विकास से है।

चिम्पैंज़ी, बोनोबो, ओरांगुटान आदि कपियों और इंसानी बच्चे जो दो साल से अधिक उम्र वाले थे वे दर्पण प्रयोग में सफल रहे। इस समूह में हाल ही में हाथी और डॉल्फिन भी शामिल हो गए हैं। 2001 में अमरीका के न्यूयार्क शहर में स्थित कोलम्बिया विश्वविद्यालय के डिना राइस ने प्रदर्शित किया कि डॉल्फिन स्वयं के प्रतिबिंब को पहचान सकती है। डिना राइस ने अपने प्रयोग के दौरान डॉल्फिन के शरीर पर ऐसे स्थानों पर निशान लगाए जो उसे सामान्य तौर पर नहीं दिख सकते थे। डॉल्फिन ने विशाल दर्पण के सामने ऐसी स्थिति चुनी जिससे वह निशान दिख सके। प्रयोग के दूसरे समूह में डिना राइस ने एक चिड़ियाघर में तीन हाथियों के सामने दर्पण रखे। उन्होंने अपने प्रतिबिम्ब को देखकर सूंड से अपने शरीर को छूने की कोशिश की। एक हाथी ने कई बार उस निशान को छुआ जो उसके सिर पर था।

हालांकि कई बार बंदरों, बिल्लियों और कुत्तों पर भी यह प्रयोग दोहराया गया लेकिन वे हर बार इस प्रयोग में असफल रहे। देखा गया कि चेहरे पर निशान लगे बंदर दर्पण के सामने उस निशान को खोजने में असफल रहे और कभी-कभार वे दर्पण में दिख रहे प्रतिबिंब को दूसरा बंदर समझकर गुस्सा भी करते थे। पक्षियों और मछलियों ने भी कुछ इसी तरह की प्रतिक्रिया व्यक्त की। इन जानवरों के इस व्यवहार को शोधकर्ताओं ने उनमें आत्मबोध की कमी माना। इस प्रयोग से पंचतंत्र की वह कहानी याद आ गई जिसमें मूर्ख शेर अपना प्रतिबिंब देखकर उसे दूसरा शेर समझकर उससे लड़ने के लिए कुएं में छलांग लगा देता है।

जो जानवर इस दर्पण प्रयोग में सफल रहे उनमें एक निश्चित जटिल व्यवहार पैटर्न देखा गया। शुरू में वे ऐसी प्रतिक्रिया करते हैं जैसे उनके सामने उनकी ही प्रजाति का कोई दूसरा जानवर हो। हालांकि अधिकतर जानवर पांच मिनट से भी कम समय में आसामान्य हो जाते हैं और अजीब तरह के शारीरिक भाव-भंगिमा दर्शाते थे। प्रयोग के दौरान यह भी देखा गया कि यदि कोई जानवर दर्पण में दिख रही नकल से मंत्रमुग्ध हो जाता था तब वह धीरे-धीरे अपने हाथ, पांव और सिर को घूमाता था और चेहरे पर अजीब तरह के भाव व्यक्त करता था। वह अपने दांतों और आंखों को देखता था और अपने प्रतिबिम्ब की खुद से समानता को समझ कर शरीर के सामान्य तौर पर न दिखाई

देने वाले भागों को देखता था। वह अपने हाथों और पैरों का उपयोग उन भागों के निरीक्षण के लिए करता था जिन्हें वह बिना दर्पण के नहीं देख पाता था।

कोई भी इस प्रयोग को कर सकता हैं। किसी कुत्ते को दर्पण में उसका प्रतिबिंब देखने की घटना का अवलोकन किया जा सकता है। इस प्रयोग में कुत्ता उत्तेजित होकर भौंकने लगता है; शायद वह समझता है कि दर्पण के पीछे दूसरा कुत्ता है। हालांकि इंसानों के बहुत छोटे बच्चों में भी इस प्रकार की प्रतिक्रिया देखी गई है। बच्चे दर्पण में अपने प्रतिबिम्ब के प्रति ऐसी प्रतिक्रिया व्यक्त करते हैं जैसे उन्हें दर्पण के पीछे दूसरा बच्चा दिखाई दे रहा हो। उम्र बढ़ने के साथ हम समझने लगते हैं कि दर्पण में दिखाई दे रहा प्रतिबिंब हमारे और हमारे आसपास की वस्तुओं का प्रतिबिंब है। यह आत्मबोध की निशानी है।

गैलप्स और अनेक अन्य वैज्ञानिकों ने माना कि दर्पण परीक्षण में सफल हो जाना ही किसी जीव के आत्मबोध का अच्छा सबूत है। वे इसका कारण यह बताते हैं कि यदि आप नहीं जानते कि आप कौन हैं, तो आप यह कैसे जान पाएंगे कि वह कौन है जिसे आप दर्पण में देख रहे हैं?

उनके अनुसार दर्पण परीक्षण 'स्नो व्हाइट एंड द सेवन ड्वार्फ' की कहानी के दर्पण के समान है। दर्पण प्रयोग के दौरान ऐसा ही तो होता है। जब उस दर्पण से पूछा जाता है 'दर्पण...दर्पण, कौन पूरी तरह से आत्मबोधी है' तब दर्पण सत्य बताता है। उनके अनुसार दर्पण कभी झूठ नहीं बोलता।

तो क्या दर्पण परीक्षण को सत्य मान लिया जाए? शायद नहीं। अब हम जानते हैं कि दिमाग का एक विशेष हिस्सा चेहरे की पहचान क्षमता के लिए उत्तरदायी है। नवजात भी जन्म से ही चेहरों पर काफी ध्यान देते हैं जो इस बात का प्रमाण है। हालांकि दिमाग का यह क्षेत्र जन्म के बाद 20 से 24 महीने की उम्र के आसपास ही परिपक्व होता है। यही कारण है कि 15 महीने से कम उम्र के बच्चे, चेहरे पहचानने की क्षमता न होने के कारण, प्रतिबिंब को पहचान नहीं पाते। इसका कारण आत्मबोध की कमी नहीं है। इसी तरह जानवर दर्पण परीक्षण में इसलिए असफल नहीं होते कि उनमें आत्मबोध नहीं है बल्कि उनकी असफलता का कारण चेहरे को पहचानने की उनकी क्षमता की सीमा है। जब जनजातीय समूहों के बच्चों पर दर्पण परीक्षण किया गया तो उन्होंने अपने चेहरों पर लगाए गए निशान को मिटाने की कोई कोशिश नहीं की। कुछ लोगों का विचार था कि ऐसा उन्होंने इसलिए किया क्योंकि उनके समाज में ऐसा रिवाज़ होता होगा कि चेहरे पर लगाए गए किसी निशान को मिटाया न जाए। इस बात को परखने के लिए जब उन्हीं जनजातीय बच्चों को एक कार्य करने के लिए कहा गया जिसमें खिलौनों पर लगे निशानों को हटाना था तो उन्होंने तुरंत उन निशानों को हटा दिया। इससे यह बात साफ हुई कि उन जनजातीय बच्चों ने दर्पण प्रयोग के दौरान निशानों पर ध्यान नहीं दिया। लेकिन इससे यह साबित नहीं हो जाता कि उनमें आत्मबोध नहीं हैं।

इससे कुछ वैज्ञानिक विचार कर रहे हैं कि 'स्नो व्हाइट एंड द सेवन ड्वार्फ' कहानी की रानी से अलग हम दर्पण परीक्षण को अकाट्य सत्य न मानें। उनका तर्क है कि दर्पण परीक्षण में सफलता को तो आत्मबोध माना जाए लेकिन असफलता को आत्मबोध की अनुपस्थिति का सत्यापन न माना जाए। ***(स्रोत फीचर्स)***